REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 9 | JUNE - 2018

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी के साहित्य में आहार की विवेचना

Pragati Bhutoria
Research Scholar,Yoga & Science of Living Department ,
Jain Vishva Bharati Institute Ladnun, Rajasthan, India.

भूमिका–

जब से इस पृथ्वी पर जीवन का उद्भव हुआ है, तभी से जीवन को आयु के अनुकूल चलाने के लिए प्राणी को आहार की आवश्यकता हुई।आहार हमारे जीवन की पहली आवश्यकता है, आहार ही जीवन का आधार है। मनुष्य की शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक सामाजिक क्षमता के सन्तुलन के लिए आहार आवश्यक है। आहार पर प्राचीनकाल से चिन्तन चला आया है। अनेक विद्वानों व मनीषियों ने आहार के बारे में बहुत कुछ लिखा है। ''आयुर्वेद के अनुसार आहार व्यक्ति के जीवन और स्वास्थ्य की गुणवत्ता को निर्धारित करने वाला एक प्रमुख अंग है।'' इसका असर न केवल शरीर की सुदृढ़ता को निर्मित करता है, अपितु व्यक्ति के मन पर भी आहार का ही प्रभाव पड़ता है। स्वास्थ्य मनुष्य की सबसे बड़ी सम्पत्ति है। जिसके आधार पर मनुष्य अपने जीवन को सार्थक बना सकता है। स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है आहार। आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने स्वास्थ्य रक्षा को ध्यान रखकर आहार पर बहुत कुछ लिखा है।

परिभाषा–

सामान्य भाषा में खाना, भोजन करना, क्षुधा–भूख रूपी अग्नि को शांत करने के लिए पदार्थों के ग्रहण करेन को आहार कहते है। (अलग–अलग अवस्था में जीव जो ग्रहण करता है, वो आहार है।)

स्वरुप एवं प्रकृति–

गीता के अनुसार सात्विक राजसिक और तामसिक–सरस, स्निग्ध, सारवान और हृदयग्राही आहार सात्विक होता है। अधिक कटु, अबल, लवण, उष्ण, तीक्ष्ण और रूक्ष आहार राजसिक है तथा बासी, रसहीन, दुर्गंधयुक्त, जूठा और अपवित्र आहार तामसिक कहलाता है। सात्विक आहार से आयु, बल, उत्साह, आरोग्य, सुख और प्रीति की वृद्धि होती है और चित्त में सत्वगुण की वृद्धि तथा आध्यात्मिक उन्नति होती है। राजसिक आहार से दुःख, शोक और रोग उत्पन्न होते है और तामसिक आहार से जड़ता, अज्ञान, कुरोग तथा पशुभाव बढ़ता है। इसलिए विचारवान व्यक्ति सात्विक भोजन से प्रेम और राजसिक एवं तामसिक भोजन से घृणा करता है।

(1) सात्विक आहार–जिस भोजन को बनाने में किसी भी प्रकार की हिंसा की संभावना नहीं रहती वह सात्विक आहार कहलाता है।

(2)राजसिक आहार–जो आहार हमारे उदर पूर्ति का साधन न बनकर विलासीता का साधन बन जाता है उसे राजसिक आहार कहते है।

(3)तामसिक आहार–इससे तात्पर्य उस आहार से है जो प्राणी, पीड़न, विवेक से रहित होता है, तामसिक आहार कहलाता है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ के अनुसार–शाकाहार और मांसाहार

शाकाहार की अनिवार्यता एवं उपयोगिता–महाप्रज्ञ के अनुसार हमारा जीवन आहार से शुरू होता है। आहार होता है तब दूसरी प्रवृत्तियां चलती है। जैसी प्रवृत्ति, वैसा संस्कार, जितनी प्रवृत्ति, उतना संसार, जैसा संस्कार, वैसा विचार, जैसा विचार, वैसा व्यवहार। व्यवहार हमारी कसौटी है। भीतरी जगत् में कौन कैसा है, हम नहीं जान पाते। मनुष्य की जो प्रतिमा व्यवहार में बनती है उसी के आधार पर उसका मूल्यांकन होता है, अच्छा व्यवहार, अच्छा विचार, अच्छा संस्कार, अच्छे आहार बिना नहीं हो सकता। इसलिए हमारे धर्माचार्यों ने आहार शुद्धि को प्राथमिकता दी है। हम अच्छाई का प्रारम्भ आहार–शुद्धि के व्रत से करें। हम न खाएं, ये सबसे अच्छा है, पर यह सम्भव नहीं है। आहार हमारे जीवन की अनिवार्यता है। पर कम से कम हम वह तो न खाएं जिसकी हमारे जीवन के लिए अनिवार्यता नहीं है।शाकाहार का आध्यात्मिक एवं धार्मिक पक्ष भी है जो हमारे जीवन से जुड़ा हुआ है। हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि। विश्व के सभी प्रमुख धर्मों के प्रणेता व महापुरुषों ने हिंसा, क्रूरता, असत्य, क्रोध, द्वेष से अन्य जीवों को आकारण कष्ट व पीड़ा पहुँचाने को गुनाह बताया है, वह अहिंसा, दया, क्षमा, सत्य, करूणा आदि को धर्म बताया है।

मांसाहारका निषेध–मांसाहार पर भगवान महावीर ने बहुत तीव्रता से प्रहार किया है। जैन धर्म ने तो मांसाहार को हिंसा की दृष्टि से तथा भाव एवं लेश्या कि मलिनता की दृष्टि से हेय माना ही है, पर विश्व के अन्य धर्म–शास्त्रों व महापुरुषों ने हर प्राणी मात्र में उस परम् पिता परमात्मा की झलक देखने को कहा है वह अहिंसा को परम धर्म माना है। अधिकांश धर्मों ने तो विस्तार पूर्वक मांसाहार के दोष बताये है और उसे आयु क्षीण करने वाला व पतन की ओर ले जाने वाला कहा है और किसी भी निरीह प्राणी की हत्या का निषेध तो सभी धर्मों ने किया है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने आहार के विविध रूप बताये है–

आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने समय–समय पर आहार के अनेक रूप बतलाये है।

(1) ओज आहार रोम आहार और प्रक्षेप आहार मनोभक्षी आहार–

ओज आहार–जब हम पैदा होते है, तब सबसे पहले जो आहार लेते है उसे कहते है ओज आहार। ओज अर्थात् हमारे जीवन की मूलभूत शक्ति। जब तक यह सुरक्षित रहती है तब तक आदमी जीवित रहता है। जब तक ओज आहार बना रहता है तब तक वह मरता नहीं। बड़ी दुर्घटना होने पर भी बच जाता है। ओज आहार के समाप्त होने पर साधारण सी लेकर ठोकर लगने पर भी व्यक्ति मर जाता हैं।

रोम आहार–हमारे शरीर का हर रोम–कूप आहार लेता है। हम मुंह से कभी–कभी आहार लेते हैं। किन्तु रोम–कूप से निरन्तर लेते रहते है। हमारा जीवन इन रोम–कूप पर बहुत निर्भर है। व्यक्ति खाता है इसलिए जीता है। यह भ्रांति है रोम–कूपों से निरन्तर आहार लेते रहते है। अगर तीन घंटा रोम–कूप बन्द हो जाए तो आदमी जी नहीं सकता। अर्थात् रोम कुपों का बंद होना मृत्यु को निमंत्रण देना है।

प्रक्षेप आहार–यह केवल आहार है जो मुंह से खाया जाता है या अन्य किसी साधन से शरीर में पहुंचाया जाता है। सूर्य का ताप हमारा श्रेष्ठ आहार है। वायु भी हमारा आहार ही है।

मनोभक्षी आहार–मन में आया कि भोजन करना है और भोजन हो गया। भोजन के सब तत्व हमारे वायुमण्डल में भरे पड़े है। सूक्ष्म जगत में वह सब कुछ है जो स्थूल जगत् में उपलब्ध होता है तो सूक्ष्म है, वहीं तो स्थूल–जगत् में जिसका स्त्रोत नहीं है वह स्थूल–जगत् में उपलब्ध नहीं हो सकता।

(2)हित, मित, ऋत–

हियाहारा, मियाहारा, अजाहारा य जे नरा।
न ते विज्जा तिमिच्छंति, अजाणं ते तिगिच्छगा।।

अर्थात् जो हित मित और अल्प मात्रा में भोजन करते हैं, उनकी चिकित्सा वैध नहीं करते, वे स्वयं अपने चिकित्सक हैं। बीमारियां पैदा होने का बहुत बड़ा कारण है अहितकर और अपरिमित भोजन। जो हितकर और परिमित खाता है, उसे बीमारी नहीं सतायेगी।

तीन शब्द है – हित, मित और ऋत। इन तीनों का अपना–अपना महत्त्व है।
हित– हितभोजी वह होता है जो स्वास्थ्य के अनुकूल भोजन करता है।
मित–मितभोजी वह होता है। जो थोड़ा खाता है।
ऋत– हितकर भोजन और मित भोजन होने पर भी भोजन ऋत नहीं होता है तो भी पूरी बात नहीं बनती। ऋत भोजन का सम्बन्ध जुड़ता है हमारी सूक्ष्म भावनाओं से ऋत भोजन का सम्बन्ध जुड़ता है हमारी सूक्ष्म भावनाओं से ऋत भोजन का सम्बन्ध जुड़ता है। हमारी मानसिक विचारधाराओं के साथ भोजन पकाते, पैदा करते तथा बनाते समय किस प्रकार की विचारधारा है, सबका प्रभाव भोजन पर पड़ता है। इस सारे संदर्भ में हम सोचते है कि 'ऋतभुक' का कितना महत्त्व ह? ऋतभुक यानी वह भोजन जिसके साथ सच्चाई जुड़ी हुई है। इसलिए भोजन बनाने वाला, भोजन पैदा करने वाला हर कोई व्यक्ति नहीं होना चाहिए। उसके लिए पवित्र भावनाओं वाला व्यक्ति अपेक्षित रहता है। यह ऋतभुक का सिद्धान्त बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है कि भोजन के समय हमारे चित्त की प्रसन्नता हो। भोजन का ऋतुओं से गहरा सम्बन्ध है। वर्षाकाल में अग्नि मन्द होती है। इसलिए तपस्या इस ऋतु में अधिक सुगमता से होती है। शीतकाल की अपेक्षा ग्रीष्म ऋतु में अग्नि मन्द रहती है। दोनों ऋतुओं में भोजन का भी अन्तर रहता है।

(3) जीवनीय, वृंहणीय, दीपनीय, बल्य–''में कुछ होना चाहता हूं'' पुस्तक में आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार आयुर्वेद के आचार्यों ने भोजन के अनेक प्रकार बतलाये है– जीवनीय, वृंहणीय, दीपनीय, बल्य आदि।**जीवनीय**पहले प्रकार का भोजन अर्थात् जीवनीय भोजन वह है जो जीवनीशक्ति को बढ़ाता है। **वृंहणीय**दूसरे प्रकार का भोजन अर्थात् वृंहणीय भोजन वह है जो शरीर को पुष्ट करने वाला होता है। **दीपनीय**भोजन अग्नि को दीप्त करने वाला होता है और जो बल की वृद्धि करता है वह भोजन **बल्य** भोजन कहलाता है। भोजन के द्रव्यों में भी विभिन्नता है– शमन करने वाले, कूपित करने वाले और संतुलित करने वाले। जो वात, पित्त, कफ पर अपना प्रभाव डालते है। जीवन का आहार चक्र भोजन से संचालित होता है।

आहार का आध्यात्मिक पक्ष

1. **ब्रह्मचर्य एवं साधना हेतु**–ब्रह्मचर्य के लिए आहार का विवेक अत्यन्त आवश्यक है। अतिमात्र आहार और प्रणीत आहार दोनों वर्णनीय है। ब्रह्मचर्य में भी सबसे पहले 'अवि णिब्बलासए' दुर्बल आहार करो, निर्बल आहार करो बताया गया है। यहीं से साधना शुरु होती है। आचार्य महाप्रज्ञ कहते है, अध्यात्म का शायद ही ऐसा कोई विषय होगा जिसके साथ भोजन की बात न हो। अर्थात प्रणीत पान भोजन का वर्जन करें। और अतिभाव भोजन का वर्जन करें। ज्यादा भी न खांए और रोज–रोज गरिष्ट भोजन भी न करें। दूध, दही, घी आदि जितनी भी विकृतिया है वे शरीर के लिए आवश्यक होती है, किन्तु वे बाधक भी बनती है।
   साधना व ब्रह्मचर्य के लिए साधक तत्त्व बताए गए है–

- **रस–परित्याग**– रस–परित्याग रसो का वर्जन। अर्थात रसों का प्रतिदिन सेवन मत करो, कभी करो, कभी छोड़ो। इस संतुलन से शरीर की पुष्टि बनी रहेगी। और विजातीय तत्व का निष्कासन भी सरलता से होता रहेगा।
- **वृत्ति–संक्षेप**– साधना व तपस्या का साधन हैं– वृत्ति–संक्षेप। जैन परम्परा में यह प्रवृत्ति बहु–प्रचलित है। द्रव्यों का नाना प्रकार से परिसीमन करना। उदाहरणतः आज में पांच द्रव्यों से अधिक नहीं खाउंगा। अमुक–अमुक द्रव्य नहीं खाउंगा, आज में केवल एक ही द्रव्य लूंगा। इस प्रकार के वृत्ति संक्षेप से अनेक बीमारियों से बचाव हो जाता है।
- **अनोदरी**– अनोदरी का अर्थ है–भूख से कम खाना। उनोदरी भी उपवास से कम नहीं है। अल्पाहार स्वास्थय का सबसे बड़ा सूत्र है। अल्पाहार से शक्ति का संचय होता है, शक्ति का व्यय कम होता है। इस

पर भगवान महावीर ने बतलाया कि एक स्वस्थ पुरुष का आहार बत्तीस कवल का होता है। इससे एक कवल, दो कवल कम खाना अनोदरी है।

- **उपवास** –तपस्या व स्वास्थ्य का एक सूत्र है – उपवास। अनशन का अर्थ केवल उपवास आदि करना नहीं है। अमेरिकी जस्टर सेल्टन ने आहार–चिकित्सा पर जो कार्य किया है, वह स्वास्थ्य का सिद्धान्त है। उन्होंने कहा आहार से विष जमा होते हैं। यदि विषों को शरीर के बाहर नहीं निकाला जायेगा तो स्वास्थ्य अस्त–व्यस्त हो जायेगा। शरीर के विजातीय पदार्थों के निष्कासन का एक मात्र उपाय है – उपवास। उपवास से पाचन तंत्र को विश्राम मिल जाता है। जब उसे विश्राम नहीं मिलता तब वह अपना कार्य पूरा नहीं कर पाता। पूरा शरीर उससे प्रभावित होता है।

2 **रसना विजय से काम विजयः–** रसनेन्द्रिय और काम केन्द्र का परस्पर सम्बन्ध है जो रसना इन्द्रिय पर विजय प्राप्त कर लेता है, वह सहज ही काम वासना पर विजय प्राप्त कर लेता है। जैसे ही जीभ का संयम होता है। वहां के स्पंदा कम हो जाते है। जब ये स्पंदन कम होते है तब काम–वासना के स्पंदन भी कम हो जाते है और आधात्मिक स्पंदन प्रारम्भ हो जाते है। वृत्तियों की चंचलता को समाप्त करने के लिए जीभ का स्थिर रखना आवश्यक होता है।

आहार का व्यवहार पक्ष–

- **अहिंसा**–आचार्य श्री महाप्रज्ञ के अनुसार आहार और अहिंसा का गहरा संबंध है। अहिंसा को एक भाव के रूप में भी लिया जा सकता हैं और यह आहार पर भी निर्भर करता है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने शाकाहार पर बल दिया और मांसाहार का पुर्णतः निषेध बताया। स्वास्थ्य और संतुलित जीवन के लिए आहार शुद्धि आवश्यक है।
- **आदतो का परिष्कार और आहार** –आदत को बदलने के लिए आहार शुद्धि करनी होती है। जिस व्यक्ति ने आहार शुद्धि नहीं कि वह कभी अपनी आदत को नहीं बदल सकता। गहरा सम्बन्ध है आहार का और आदतों का। मस्तिष्क के अपने रसायन है– जैसे शरीर को भोजन की अपेक्षा होती है। वैसे ही मस्तिष्क को भी भोजन की अपेक्षा होती है। शरीर को टॉनिक चाहिए तो मस्तिष्क को भी टॉनिक चाहिए। मस्तिष्क का सम्बन्ध है–विद्युत के आवेशों से और रसायन से रसायन बनते है आहार से।आज के आहारशास्त्री बतलाते है जैसा हमारा आहार होता है वैसे ही न्यूरो ट्रांसमीटर बनता है और वही– न्यूरो ट्रांसमीटर हमारे व्यवहार का निर्धारण करता है। आहार का संबंध मस्तिष्क में पैदा होने वाले रसायनों के साथ हैं, यदि मन की प्रसन्नता को बनाए रखना है तो सबसे पहले आहार पर ध्यान देना होगा। जीवन में सबसे ज्यादा जरूरी विषय है आहार।

आहार का स्वास्थयपक्ष–

- **शारीरिक स्वास्थ्य** इस दृष्टि से विमर्श करने वाले पोषणविदों और चिकित्साविदों ने बतलाया कि शारीरिक स्वास्थ्य का मूल आधार है– संतुलित भोजन। शारीरिक तत्वों से क्रियासंचालन के लिए जो–जो भोजन तत्व अपेक्षित है, उन सबका हमारे भोजन में होना संतुलित भोजन है। प्रोटीन कार्बोहाइड्रेट, स्नेह, लवण, क्षार, लोहा और विटामिन्स–ये उचित मात्रा में खाए जाते हैं। वह संतुलित भोजन माना है, इससे शरीर स्वस्थ और क्रिया करने में सक्षम रहता हैं।
- **मानसिक स्वास्थ्य** मन स्वस्थ रहें। हमारे लिए बहुत मूल्यवान है। भोजन का मन कि क्रियाओं पर बहुत असर होता हैं। हमारा मन मस्तिष्क की रासायनिक प्रक्रिया से प्रभावित होता है और मस्तिष्क की रासायनिक प्रक्रिया भोजन से प्रभावित होता है और मस्तिष्क की रासायनिक प्रक्रिया भोजन से प्रभावित होती हैं। इस अर्थ में वह केवल शरीर को ही पोषण नहीं देता, मन को भी पोषण देता है। वह केवल शरीर कि क्रियाओं का संचालन नहीं करता उससे मन की क्रियाएं भी संचालित होती।
- **रात्रि भोजन निषेधः रोगों से मुक्ति**–रात्रि भोजन न करना धर्म से सम्बन्धित तो है ही क्योंकि यह धर्म के द्वारा प्रतिपादित हुआ है। वैज्ञानिक कारण भी है। हम जो भोजन करते हैं उसका पाचन होता है तैजस शरीर के द्वारा। पाचन की शक्ति है तैजस। भोजन का पाचन होने के लिए सूर्य का आतप आवश्यक होता

है। जब उसे प्रकाश नहीं मिलता तब वह निष्क्रिय हो जाता है। पाचन कमजोर हो जाता है। इसलिए रात को खाने वाला अपच की बीमारी से बच नहीं सकता। यह कारण वैज्ञानिक है। दूसरा कारण है कि जब सूर्य का आतप होता है, तब कीटाणु बहुत निष्क्रिय होते हैं। जैसे ही सूर्य चला जाता है, सब में प्राण शक्ति का संचार होता है और वे सब सक्रिय हो जाते हैं। वे अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं। बीमारियां जितनी रात में सताती हैं, उतनी दिन में नही सतातीं। वायु का प्रकोप भी रात में अधिक होता है। ये सारी बीमारियां रात में इसलिए सताती हैं क्योंकि रात में ताप नहीं होता। जब ताप होता है तब बीमारियां उग्र नहीं होतीं। जैसे ही सूर्य का ताप मिटता है, बीमारियों में शक्ति आ जाती है। इसलिए जैन परम्परा में रात्रि भोजन निषेध बताया गया है तथा सुर्यास्त से पहले भोजन करने का प्रावधान है। जिससे भोजन का पाचन सुचारू रूप से होता है। और शरीर रोगों से मुक्त रहता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आचार्य महाप्रज्ञ, आहार और अध्यात्म,जैन विश्व भारती लाडनूं 1996.
2. आचार्य महाप्रज्ञ, मुक्त भोग की समस्या और ब्रह्मचर्य, जैन विश्व भारती लाडनूं, 1997
3. आचार्य महाप्रज्ञ, महावीर का स्वास्थ्य शास्त्र, जैन विश्व भारती लाडनूं, 1997
4. आचार्य महाप्रज्ञ, मैं कुछ होना चाहता हूँ, जैन विश्व भारती लाडनूं, 2009.
5. आचार्य महाप्रज्ञ, आमंत्रण आरोग्य को, जैन विश्व भारती लाडनूं, 2001.
6. आचार्य महाप्रज्ञ, आहार : साधना और स्वास्थ्य, जैन विश्व भारती लाडनूं, 2003